अनवरत सुखाड़ व चिरंतन अकाल में 'तीसरी फसल'

अरविंद

1993-94 में पलामू घूमते हुए मशहूर पत्रकार **पी साइनाथ** को स्थानीय ग्रामीणों ने भ्रष्टाचार की नयी परिभाषा के रूप में 'तीसरी फसल' का सूत्र दिया था. तीसरी फसल का अभिधार्थ है सूखा राहत. यानी जलाशय, कुएं, बांध बनाना व खोदना, लोगों को आर्थिक व खाद्यान्न मदद पहुंचाने आदि के नाम पर एक विशाल खर्च. मगर इस 'फसल' को कृषक व मजदूर नहीं, बिचौलिये, नौकरशाहों, ठेकेदारों व स्थानीय नेताओं से बना अभिजात्य तबका काटता है.

जल संसाधन विभाग, झारखंड के अनुसार 2008 तक 32 से अधिक वृहद व मध्यम सिंचाई योजनाएं चल रही थीं. बड़ी परियोजनाओं में उत्तरी कोयल (1970), कनहर (1973), अमानत (1983), बटाने (1976) प्रमुख है. इन चार बड़ी परियोजनाओं की मूल लागत 188 करोड़ थी, जबकि वर्ष 2008 तक इन पर 2174 करोड़ रु खर्च हो गये हैं. तल्ख सच्चाई यह है कि सिंचाई व्यवस्था का ऐसा कुप्रबंधन कि बीते तीन दशकों में कई बड़े बांध आज भी पूरे नहीं हुए. पर डैम भले बंद हो जाये, उस पर सरकारी खर्च और ठेकदारी नहीं. अभी मलय, बुटनडुबा, सदादहा, जिंजोई, चाको, बिरहा, घाघरी, सोनारो, पीरी, दरही, बटाने, उतराही, कवलदाग, दानरो, फुलवरिया आदि दर्जनों परियोजनाएं चालू हैं. हाल तक **जल संसाधन मंत्री रहे चंद प्रकाश चौधरी** कहते हैं कि 'बिहार के समय से इस इलाके के साथ गलत हुआ. स्थिर व स्थायी सरकार न रहने के कारण भी परियोजनाएं पूरी नहीं हो रहीं.' ऐसी स्थिति तब है, जब पलामू क्षेत्र से दो बार जल संसाधन मंत्री बने हैं.

1988 में एक गैर सरकारी संगठन ने बिहार हिल एरिया लिफ्ट इरिगेशन कॉरपोरेशन के 157 लिफ्ट इरिगेशन स्ट्रक्चर में दो को ही सही पाया था. आज भी स्थिति नहीं बदली है. अर्थशास्त्री डॉ रमेश शरण बताते हैं कि अविभाजित बिहार में 75 फीसदी बांध दक्षिणी हिस्से यानी झारखंड में प्रस्तावित हुए. मगर सरकार का ही आंकड़ा है कि 1958 में 2 लाख 85 हजार हेक्टेयर की जगह सिंचाई क्षमता 1998 में एक लाख नब्बे हजार हेक्टेयर रह गयी.

सीपीआइ के **केडी सिंह** कहते हैं कि 'मंडल डैम से औरंगाबाद सिंचित होगा. पर पलामू में केवल हुसैनाबाद और गढ़वा में मझिआंव क्षेत्र को इससे फायदा है. छत्तरपुर में बटाने व हरियाई डैम है, मगर छत्तरपुर को नहीं, बल्कि हरिहरगंज को लाभ है.' अरुण सिंह कहते हैं 'तालाब व चैकडैम की योजनाओं में तो लूटतंत्र हावी है. बीते सालों में 800 तालाब छतरपुर को रिलीफ फंड के जरिये दिये गये. पर इनमें से 100 तालाब तो ट्रेसलेस हैं.'

सुखाड़ होने पर आपदा राहत के रूप में ग्रेच्युअस फंड (अनुग्रह अनुदान), नलकूप, पंपसेट, संतप्त परिवारों को अनुदान, कृषि इनपुट आदि मदद दी जाती है. आपदा प्रबंधन विभाग द्वारा 2009-10 में सुखाड़ राहत पर आवंटित 8.5 करोड़ में से फरवरी तक 5.9 करोड़ ही खर्च हुए. मार्च 2010 तक बीपीएल, अंत्योदय, प्रीमियम वापसी, फसल बीमा और बीज पर सौ करोड़ से अधिक बांटने का दावा विभाग करता है. लेकिन एनडीए सरकार में जल संसाधन मंत्री रहे **रामचंद्र केसरी** कहते हैं कि 'ग्रेच्युअस फंड के तहत गढ़वा में करीब 6 हजार किसानों के लिए 24 लाख से अधिक आवंटित हुआ, मगर नगरउंटारी इलाके के अलावा कहीं कुछ नहीं बंटा. सारा पैसा मार्च में सरेंडर हो गया.'

जल संसाधन विभाग में प्रधान सचिव आरएस पोद्दार के अनुसार 'विभाग का विजन गुजरात मॉडल का अनुसरण करना है. गुजरात में एक लाख चैक डैम के तर्ज पर अगले पांच साल में सालाना बीस हजार चैकडैम बनाने का सपना है.' अभियंता प्रमुख कहते हैं कि 'वर्ष 2010-11 में बड़ी व मध्यम परियोजनाओं पर 360 करोड़ तथा लघु योजनाओं पर 115 करोड़ रुपये खर्च किये जाने की योजना है.' मगर कितने काम हो पायेंगे, इसका अंदाजा तालाबों की स्थिति से लगाया जा सकता है. 2009-10 के दौरान राज्य में सवा लाख तालाब खोदे जाने थे. यानी 114050 तालाब, मगर 7447 खोदे गये. 51944 तालाबों के लिए 554.37 करोड़ स्वीकृत हुए. इनमें से 29099 तालाब का कार्य प्रारंभ हुआ, पर खर्च हुए केवल 5.44 करोड़ ही. पलामू में 7225 तालाब खोदने के लक्ष्य में 1604 पर कार्य प्रारंभ हुआ, मगर पूर्ण केवल 1284 ही हुए.

सूखे से निबटने के लिए केंद्र की एक महत्वाकांक्षी योजना है सूखा प्रभावित क्षेत्र कार्यक्रम (डीपीएपी). अविभाजित बिहार में 1980 में 54 डीपीएपी ब्लॉक थे, जो 1996 में 122 हो गये. अब झारखंड के 15 जिले डीपीएपी में आते हैं, जो राज्य के आधे भूभाग का प्रतिनिधित्व करते हैं. 2006-07 तक समूचे झारखंड में ऐसी कुल 1322 परियोजनाओं की लागत 39960 लाख रु रही और 2001-07 के दौरान सालाना औसतन बीस से अधिक परियोजनाएं पलामू में चलीं. लेकिन करोड़ों रुपये खर्च होने के बावजूद क्षेत्र में राहत नहीं दिखती.

पत्रकार गोकुल बसंत कहते हैं कि सूखे के स्थायी समाधान के लिए नेता उतावले नहीं है. हो-हल्ला खूब होता है, मगर ध्यान सरकारी योजनाओं की बंदरबांट पर ज्यादा होता है. सूखे पर राजनीति होती है. पूरा इलाके में सांसद या विधायक क्षेत्र विकास निधि से शायद ही कोई स्थायी जलाशय या सूखे से निबटने का प्रेरणादायी काम हुआ हो. भाकपा राज्य परिषद के सदस्य **शैलेंद्र** कहते हैं कि 'बीते साल से सूखे से राहत दिलाने में जिला प्रशासन नाकाम रहा है. उपायुक्त का एप्रोच प्रो-पीपुल नहीं, बल्कि खांटी ब्यूरोक्रेटिक है, जिससे समस्या बिगड़ती गयी है.'

1978 से राज्य में पंचायत चुनाव नहीं होने से स्थिति काफी बिगड़ी है. अधिकांश सरकारी योजनाओं व कार्यक्रमों में भ्रष्टाचार हावी है, लीकेज व देरी से लेकर लाभुकों के चुनाव में गलतियां होती हैं, तथा आवंटन की खराब स्थिति से लेकर विविध स्तरों पर जवाबदेही की भारी कमी है. कई इलाकों में प्रखंड नियमित नहीं खुलते या डिफंक्ट हैं. ऐसे में अपडेट रिपोर्टिंग कैसे होगी और सुखाड़ राहत कार्यकम चलेंगे कैसे? इसलिए मद में आवंटित राशि तक सरेंडर होती है.

(जारी)

(सीएसडीएस के इनक्लूसिव मीडिया फेलोशिप के तहत लिखा गया आलेख.)

PRABHAT KHABAR, RANCHI
18 JUNE, 2010,